सोनमछरी

गीताश्री

सोनमछरी

रुंपा दीदी... ओ रुंपा दीदी... दरवाजा खोलो... तुम्हारे लिए संदेशा आया है...।'

https://www.hindiadda.com/sonmachri/

मन में कुछ बेचैनी सी थी। सुबह से कुछ भी भला नहीं लग रहा था। रुंपा ने यह हकार सुनी, कोई उत्साह न हुआ

'कि होच्छे?'

सवाल पूछती हुई रुंपा ने आँगन पार किया और दरवाजा खोल दिया। हवा तेज थी। गंगा किनारे की हवा में वैसे भी तुर्शी होती है। अपने मन मिजाज की हवा कब बिगड़ जाए, कब सँवर जाए, दैवो न जानम। गंगई हवा का मिजाज किसी स्त्री की तरह लगा उसे। आज हवा में एक सनसनीखेज खबर थी। वह सन्नाटे में डुबो गई रुंपा को।

शंकर लौट रहा है।

शंकर... राजा... सात पहाड़ पार कर सोन फूल लेने गया था जो, पूरे साल भर बाद अब लौट रहा है... चौखट पर ही धम्म से बैठ गई रुंपा।

'क्या... वह जीवित है...? नहीं ईईई... है तो रहे, जाए कहीं और... अब क्यों लौट रहा है, क्या करेगा लौटकर, क्या होगा उसका? अब जब सारे रास्ते बंद हो चुके हैं। उसके लिए कुछ भी तो नहीं बचा। शंकर...' रुंपा अब रो पड़ी। दोनों हाथों से बाल नोच लिए।

सारे वाकयात से बेखबर धूप आँगन में उतर आई थी, नरम सी।

खबर देने वाली, हकार देने वाली आवाजें लौट चुकी थीं। चौखट तक पहुँच कर अमित दास ठिठक गया। उसके हाथ से राशन का सामान छूटकर रुंपा के आगे बिखर गया था। रुंपा की आँखों के आगे बीते दिन पसर गए...

आज सुबह से ही रुंपा इतरा रही थी। कैसा अनोखा पति मिला है। रात को बिना कहानी सुने सोता नहीं। रुंपा है कि पीहर से कहानियों का पिटारा लेकर आई है। शंकर को रोज कहानी सुनना है। रुंपा किस्से किस्तों में सुनाती है। रोमाँचक मोड़ पर कहानी और रुंपा-शंकर का प्रणय एक साथ पहुँचते और कल फिर फिर से वादा लेकर खत्म होते। शादी के पहले महीने की रातें शायद ऐसी ही होती हैं... रुंपा ने कई बार सोचा।

रुंपा की सबसे प्रिय कहानी की एक थी रानी। उसने प्रण किया कि राजा को तभी अपनी देह छूने देगी जब वह उसके लिए सात पहाड़ पार करके सोन शिखर के सोन फूल ला देगा और जिसे अपने हाथों से उसके जूड़े में लगाएगा। राजा पहले बातें टालता रहा, मनुहार करता रहा, प्रणय की, प्रेम की दुहाई देता रहा, रानी ना मानी सो ना मानी। मान

किए बैठी रहीं। ये घोड़े, ये सैनिक, ये तीर कमान, तलवारें किस काम की। जो प्रेमिका की माँग पूरी न करवा सकें। धिक है धिक...। अब तो हम देह को हाथ ना लगाने देंगे। हमारी देह चाहिए तो हमारे मन की सुनो। सुनो कि मन क्या माँगता है। पहले मेरे मन को जीतो मेरे राजा, फिर मेरी देह तुम्हारी। मन के मार्ग से देह तक पहुँचो... जाओ सोन-फूल लाओ। राजा तो रानी की काया की माया में उलझ-उलझ मिमिया उठा। रानी की देह से उठते शोले उसे चैन नहीं लेने देते। रानी थीं कि अगिया बैताल बनी हुई थीं।

राजा को आखिर हार माननी पड़ीं। लाव-लश्कर लेकर कूच कर गया - सोन शिखर की ओर। रानी बैठ गई महल के झरोखे पर - निगाहें रास्ते पर अटक गईं।

'फिर क्या हुआ? क्या राजा स्वर्ण-फूल लाया? ऐसी जिद क्यों? सबकुछ तो था रानी के पास, फिर ऐसी मुश्किल माँग क्यों?'

शंकर थोड़ा असहज था।

कई सवाल दाग दिए।

रुंपा ने कहानी यहीं रोक दी। 'बाकी कल सुनाएँगे। अभी राजा रस्ते में है - उसे सात पहाड़ पार करने हैं। उसे काम करने दो।'

'नहीं अभी...' शंकर फुसफुसाया। उँगलियाँ घाटियों की तरफ रेंग रही थीं। रुंपा ने उन्हें दबोच लिया।

'सुनो, कल से तुम बीड़ी फैक्ट्री नईं जाओगे। बीड़ी बनाने और गिनने का काम बंद। तुम मछुआरे हो, अपना पुराना, खानदानी काम फिर से शुरू करो। गंगा में जाओ, मछलियाँ बेचेंगे हम। अच्छी कमाई होएगी। तुम लाओगे, मैं बेचूँगी घर-घर घूम के या मोहन दा हैं ढाबे वाले, उनसे सौदा सुलुफ कर लेंगे।'

'ना बीड़ी बनाओगे, ना पीओगे, ना कलेजा धौंकेंगा, एई दिके आमार संसार चोलबे ना...

देखो, राजूर और मयूख बाबू की अवस्था होच्छे...?' रुंपा ने फरमान जारी कर दिया।

नई नवेली दुल्हन का चेहरा गुस्से और बेचारगी में और सिंदूरी हो उठा था। शंकर ने उसकी तरफ नेह से देखा और रात की स्मृतियाँ कौंध गई।

रुंपा को तंबाकू की गंध से उल्टी सी आती है। वह नहीं चाहती कि शंकर बीड़ी का धंधा करे।

'हमें तो माछ मारने का अभ्यास रहा नहीं। पूरा जांगीपुर बीड़ी बनाने के धंधे में लगा हुआ है। यही हमें रोजी-रोटी देवे है। कइसे छोड़ दें इसे। एक दिन में कोई दूसरा काम नईं शुरू हो सकता है।'

शंकर ने उसे प्यार से समझाया।

'नईं छोड़ेगा तो मरेगा... माननी पड़ेगी मेरी बात।'

रुंपा शंकर की कोई दलील सुनने को तैयार नहीं हुई। कैसे होती, विदा होकर आते ही उसने यहाँ जो नजारा देखा, उसने उसे हिला कर रख दिया था। जिसको देखो, वही खाँस रहा है, खून की उल्टियाँ कर रहा है। पट्टीदारी के मयूख बाबू अस्पताल दौड़ते दौड़ते तबाह हुए जा रहे हैं। ना टीवी ठीक हो रही है ना बीड़ी बनाना छूट रहा है। आँगन में, गली में, सड़क पर जहाँ देखो, वहीं तेंदू पत्तो के ढेर, तंबाकू की गंध भरी हुई।

'देख बउ... बीड़ी तो तुझे भी बनानी होगी, ना बनाएगी तो कहाँ से खाएगी।'

शंकर ने साफ साफ रुंपा को बोल दिया।

'काहे? तुम जो हो, खिलाने के लिए... जो लाओगे, रुखा सूखा खा लेंगे... जनमजूरी कर लेंगे...'

'फिर भी बीड़ी जितने पैसे ना कमा पाएगी...'

'मुझे पैसे की नाईं, तेरी जान की चिंता है...।'

रुंपा के चेहरे पर रेखाएँ और गहरी हो गईं। पर वह दृढ संकल्प थी। वह तय करके आई थी। चाहे जो हो जाए, तंबाकू गंध से पति के दामन को छुड़ा कर ही दम लेगी।

'कुछ नहीं होता रे... एक मयूख दा को देख कर तेरी ये हालत हुई है। और किसी को देखा है... सब मजे में काम कर रहे हैं। रहने दे फालतू का हठ मत कर रे...।'

शंकर झल्ला उठा।

'तुम्हे मालूम है कि जब शादी की बात उठी थी तब मैंने पूछा था कि लड़की को बीड़ी बनानी आती है। तेरी घरवालो ने बताया कि आती है, तब मैं शादी के लिए तैयार हुआ। देख मयूख दा की यहाँ, बउदी भी बनाती है, बच्चे भी लगे पड़े हैं। उनके यहाँ आमदनी भी ज्यादा है। तू कमाएगी तो अपने घर की हालत भी सुधर जाएगी ना...'

राजा रानी को समझाता रहा और रानी...

रानी अपनी जिद पर अड़ी थीं। राजा को जाना ही होगा।

राजा जानता था अगर रानी की बात नहीं मानी तो रात को उसके साथ क्या होने वाला है। इतनी सुंदर रानी पाकर निहाल शंकर दास रात की कलह नहीं चाहता था। एक रात ही तो थी दोनों के बीच जो सुनहरे फूलो की बातें करती थीं। जहाँ तंबाकू की गंध, पसीने की गंध को मार देती थी। चूल्हे के धुएँ से तपी हुई देह की सारी आग इसके हिस्से आती थी... वो सात पहाड़ लाँघ आता था। राजा ने हार मान ली।

रुंपा बड़े उत्साह से जाल का इंतजाम करने में जुट गई। नाव के लिए तरुण दा से बात करनी पड़ेगी। जांगीपुर में सबसे ज्यादा और सबसे अच्छी मछरी पकड़ने में तरुण दा का जवाब नहीं। हिल्सा 400 रुपये किलो बिकती है और तरुण दा मालामाल होकर लौटते हैं। रुंपा को लगा जैसे बीड़ी के बंडल पर सोन मछरी पसर गई है...।

बहुत मोटी मछलियाँ उसके जाल में मरने-फँसने को आतुर थीं। मीठे जल की मछलियाँ छोटे मछुआरे के जाल में फँसती तो हैं लेकिन नदी में गहरे छकाती भी खूब हैं।

मति मारी गई थी रुंपा की। शंकर उसके आगे झुक गया। उसे हिल्सा रोहू, सिंघी... सारी मछरी सोन मछरी की तरह दिखने लगी थी। किसी तरह जुगाड़ करके नाव, पतवार और जाल लेकर शंकर रवाना हो गया। गंगा किनारे उसे विदा करने रुंपा गई। दूर तक टा टा टा... विदा का गान चलता रहा। वह खुश थी कि पति पर उसका रौब चला और वह अब मोहल्लेवालियों के सामने अपनी नाक ऊँची करके बात कर सकती है।

दिन भर रुंपा की ठिठोली चलती रीना दास और नजमा आपा के साथ। टोकरी में तेंदूपत्ता और तंबाकू भर कर वे बैठती, बोरा बिछाकर।

गंगा किनारे बसा धुलियान गाँव के ये चंद झोपड़े दोपहर में गुलजार हो जाते थे। चहलपहल शुरू हो जाती थी। गंगा किनारे बरगद की घनी छाया के नीचे बने चबूतरे

पर जमी लड़कियाँ, स्त्रियों में होड़ सी रहती थी। गायें, भैंसे और लड़के पानी में छपछप करते और उनकी हमउम्र लड़कियाँ उन्हें तरसती निगाहो से देखतीं, आपस में कुछ बात करती और ठठा कर हँस पड़ती थीं। ये धुलियान की इस बस्ती का रोज का रुटीन था। रुंपा ने देखा था धुलियान की दोपहरी कैसे गंधाती थी। कीचड़ और सड़ी हुई मछलियों की गंध पर हावी रहती थी तंबाकू की वो गंध जो स्त्रियों की उँगलियों में दबी रहती थी। चटर पटर बीड़ी बनाती हुई लड़कियाँ इस बात से मस्त रहा करती थी कि जितने अधिक बंडल बनाएगी उतने दाम मिलेंगे। इन सबमें अकेली रुंपा क्रोशिया लेकर बैठने लगी। सफेद मोटे धागे से थाली का कवर बुनना था, पट्टीदारी में बैना वाली थरिया ढक कर भेजने से प्रतिष्ठा बनती है। उसके मायके में तो खुली थरिया किसी ने नहीं भेजी थी। 'यहाँ मोटी चाल के लोग हैं... हुम्म्म्...' रुंपा ने सोचा। उँगलियाँ थकने लगी थीं।

तीन चार दिनों में ही शंकर ने मछलियों का ढेर रुंपा के सामने उझीलना शुरू कर दिया। मोहन दा आते, मछली का भाव लगाते और ले जाते। कुछ अपने लिए रोज पकाने के लिए रख लेती। ये सोच कर रुंपा थोड़ा अकड़ जाती कि उसके यहाँ रोज मछली का सालन बनता है...। तीन दिन पानी, मछली से जूझने के बाद शंकर को आराम का मन हुआ।

'आमी जाबो ना...'

'किए...?'

'बस यूँ ही... शंकर थोड़ा शरारती हो रहा था। आज कथा पूरा कर दो ना...'

'नहीं... दिन में ही..., रात पक्का... मालिश भी कर दूँगी... जाओ... आलस ना करो...'

'नहीं जाता... क्या कर लेगी तू...? जा...'

'सुन आज तू भी साथ चल... मौसम भी देख कैसा कैसा तो हो रहा है...!'

'मैं का करूँगी जाके... तू हो आ... जादा दूर ना जाना... एक या दु बार में जो हाथ लगे, आज के लिए वोई काफी है... मोहन दा को मना कर देंगे कि आज खाली है...'

रुंपा जिद पर अड़ी थी। बिहार के किशनगंज की जिद्दी रानी, ना बांग्ला ठीक से बोल पाती है ना बात समझ पाती है। 'हुम्म्म्...' शंकर ने सोचा, बेकार है इससे माथा-पच्ची, चल बेटा निकल ले, नहीं तो आज की रात करिखा (काली) समझ ले... रात सोच कर

ही उसकी देह सुरसुरा गई। 'चल बेट्टा... विष्टी को भी देख लेंगे... जल्दी लौट कर करना क्या है... कि कोरबो... कथा करबो...'

शंकर गुनगुनाया...

'दिने रे बेलाए भात, राते रे बेलाए रोट्टी... कखनो कखनो माछर पोट्टी...'

गंगा किनारे की ठंडी हवाएँ, आकाश के रंग भी हल्का बदला हुआ सा। शंकर को अद्धा पव्वा का खयाल आया... आज जरूर ही घर लेके आएगा... रानी को भी चखाएगा... माल्टा का रंग तो लाल होता है, पी लेगी... नहीं मना करेगी... सोचते सोचते नाव किनारे से दूर चली गई। शंकर की हल्की आवाज हवा में गुम हो गई... जाश्ची...।

रुंपा किनारे पर वैसी ही खड़ी, मुक्का दिखती हुई। वह खुश थी कि जबरदस्ती भेजा और शंकर को जाना पड़ा। शंकर ओझल हुआ तो वह पलटी... हवा की तेज लहर उसे हिला गई। डगमगाई, जल्दी से कीचड़ में गड़े हुए बाँस को पकड़ा। पीन पयोधर दुबरी गता वाली रुंपा हवा का तेज झोंका भी कैसे सहती। वह जानती थी अपनी शक्ति को इसीलिए लड़खड़ाते हुए सबसे पहला सहारा पकड़ा। सामने जो दिखा। गंगा के तेवर कुछ ठीक नहीं दिखे। बादल घहराने लगे थे। हवा तेज हो गई थी। गंगा का पानी इतनी तेज तो कभी नहीं बहता था। जब से आई है, गंगा को अपनी ही तरह शांतचित देखा है। हाँ, नजमा आपा जरूर एक दिन बता रही थीं कि गंगा का मिजाज बिगड़ जाए तो तबाह कर देती है। बच के रहना पड़ता है। रुंपा ने इस ओर ध्यान नहीं दिया था। उसे तो अपनी नई नई गृहस्थी बसानी और बचानी थी।

रुंपा ने आकाश की ओर देखा और काँप गई। ई का... तेज हवा बदन को चुभ रही थी। पानी में हिलोर उठ रहा था। हहराई हुई गंगा को देखकर वह चीख पड़ी -

'नजमा आपा ...शंकर को रोकवाइए... ज्यादा दूर नईं गया होगा...'

झोंपड़े के बाहर बैठी नजमा आपा तक चीख पहुँची, सारी उँगलियाँ एक साथ थम गईं।

तूफान तेज तेज और तेज... रुंपा को किसी तरह सारे मिलकर घर ले गए। दिनभर गली में तूफान का कहर चलता रहा।

पहली बार इतनी तेज हवा देखी है... 'या खुदा... रहम बरपा... नजमा आपा की आवाज काँप रही थी। रुंपा सिसक पड़ी। आपा... लौट आएगा ना शंकर...?'

'लौट आएगा... चिंता न कर... तूफान इधर आया था ना, तब तक वो आगे निकल गया होगा... होता रहता है, लोग लौट आते हैं, तू फिकर मत कर... लेकिन जब मौसम खराब होता दिख्खे तो गंगा में उतरना नहीं चाहिए... तूने जाने क्यों दिया...?'

रुंपा क्या जवाब देती... उसने ही तो जिद करके भेजा था। शंकर जाना कहाँ चाह रहा था। उसने तो संकेत भी किया था... कहाँ समझ पाई। वह गंगा किनारे वाली जो नहीं थी। पोखरे में छोटी छोटी मछलियाँ पकड़ते, सहेलियों के साथ छपाक छपाक... करते बचपन कटा और ब्याह लायक कब हो गई। पता ही नहीं चला। मछली की गंध उसे फूलों से भी ज्यादा पसंद थी। अरगनी पर मछली सुखाना उसका प्रिय काम था। उसे याद आया, भुट्टो दाई अक्सर मछलियाँ अगरनी से तोड़ कर ले जाया करती थीं, सबकी नजर चुरा कर।

एक दिन - 'ये पकड़ा... भुट्टो दाई चोरनी... जंगल नाचे मोरनी...'

चोरनी बोलती है... 'जा तुझे मछली ही काटेगी... मरेगी तू... मेरा शराप है... शराप...'

तिलमिलाती हुई भुट्टो दाई चली गई। रुंपा उनको मुँह चिढ़ाती रही। दूर खड़ी माँ ने सारा नजारा देखा और चिंतित हो गई। सारा गाँव जानता था कि भुट्टो दाई क्या हैं... कुपित हो जाए तो...! 'लेकिन ये मछली काटे... क्या शराप... का किया इस लड़की ने...?'

'रुंपा... रुंपा... साँझ हो गई... चल दीया जला... शंकर आता ही होगा... सरसो पीस ले, झोर बनाना होगा ना।'

रीना दास खड़ी थीं, बीड़ी का बंडल लिए। बाजार में मुंशी के हवाले करने जाना था उन्हें।

'मैं आती हूँ... तू चिंता ना कर... तूफान गया। लेकिन नजमा आपा की झोपड़ी में पानी घुस आया है, सब पानी निकालने में लगे हैं।'

रुंपा झटके से उठी और बिना किसी को कुछ बताए सीधे भागी। रीना चिल्लाई, नंग-धड़ंग ननकू पीछे भागा - 'बउदी बउदी... रुको... कहाँ जा रई हो...?'

गंगा शांत थी, राजा का कहीं पता नहीं और रानी बेहाल थीं। देर रात तक गंगा की मटमैली सतह पर रुंपा की करुण पुकार तैरती रही। अँधेरा कुछ ज्यादा ही घना था। ढिभरी की रोशनी देर तक काँपती रही। शंकर ना आया।

एक दिन... दो दिन... तीन दिन... तीन महीने... धुलियान बस्ती में एक ही चीख थी जो सबके दिल को दहला रही थी। उसकी खुशियों को मछली ने ही डंक मार दिया था। एक साल होने को आए... सबने मान लिया कि शंकर को गंगा ने लील लिया। तूफान में फँसकर अक्सर मछुआरे डूब जाते हैं, कभी लौट कर नहीं आते। कोई कोई ही बच पाता है, भाग्य का बली। शंकर उनमें से नहीं निकला। रुंपा बज्जर की हो चुकी थी। घरवाले किशनगंज लिवाने आए, वह शंकर का घर छोड़ने को तैयार नहीं हुई। काम धाम करना आता नहीं था, घरवाले सहानुभति देकर लौट गए। एक दिन नजमा आपा ने तेंदू पत्ता और तंबाकू की टोकरी पकड़ा दी और रुंपा उस इलाके में सबसे ज्यादा बीड़ी बनाने वाली महिला बन गई। बीड़ी इकठ्टा करने वाला कान्हा बीड़ी फैक्ट्री का मुंशी अमित दास भौंचक्का रहता कि कैसे बना लेती है, औरत है या मशीन...।

अकेली, गंगा किनारे बैठकर पानी की तरफ देखती हुई, उँगलियाँ बीड़ी लपेटती जाती हैं। जैसे गंगा को अगोर रही हो, जाएगी कहाँ। रीना दास, नजमा आपा, शोमा दीदी... सब देख देख ठंडी आहें भरती... अब उन्होंने आश्वासन देना बंद कर दिया था। शायद उन्हें पता हो कि आश्वासन कई बार जख्म पर मरहम की तरह नहीं, उत्प्रेरक की तरह काम करते हैं।

और एक दिन... अमित दास ने सबको चौंका दिया। रुंपा अब बीड़ी आँगन में बनाने लगी थी। एक साल बाद जब वह मुस्कुराई तो नजमा आपा समेत सबके सीने पर रखा पत्थर हटा।

शंकर उसकी यादों से जा चुका था और अमित दास यादों की दहलीज पार कर मन के आँगन में प्रवेश कर चुके थे।

नई गृहस्थी शुरू हुई और दोनों खुश थे। इन्हें देख देख कर पूरी गली खुश थी... चलो, किसी का घर फिर से बस गया। अमित दास ने रुंपा को सहकारी बैंक से लोन दिलवाया और पौल्ट्री फार्म खोलने के लिए जमीन तैयार कर दी। चूजे बस आने वाले थे।

उस सुबह अमित राशन लेने गया था। रुंपा ने उठते ही राशन की मौखिक लिस्ट सुना दी।

'आज सरसों वाली आलू की तरकारी बनाना... भात के साथ... आता हूँ...'

अमित ने हौले से उसका गाल थपथपाया, उसी से पैसे लिए और मंडी की तरफ निकल गया। रुंपा लाज से भर उठी... अमित उसे बच्चों की तरह कई बार लेता है। खेलता है जैसे कि इससे हँसी की हिलोर उठेगी। एक बार फिर उसे हँसाता हुआ गया।

जब लौटा तो दुनिया बदल चुकी थी। रुंपा गहरे सदमे में जा चुकी थी और बाहर सारे गली वाले खुसुर पुसुर में लगे थे। सबके चेहरे पर एक ही सवाल, जिसे अमित समझ रहा था और जिसका उत्तर रुंपा के पास था।

भीखन दास ने बताया कि शंकर आ रहा है। गंगा के तूफान में फँसकर नाव बहती हुई पदमा नदी में जा गिरी थी। वहाँ इसे गिरफ्तार कर जेल भेज दिया गया था। वहाँ साल भर सजा काटने के बाद शंकर समेत कई भारतीय मछुआरों को बांग्ला देश सरकार ने रिहा कर दिया था। पदमा... गंगा ही तो है जो स्त्री की तरह दूसरे देश में जाकर नाम बदल लेती है। वे भूल गए थे कि गंगा कभी कभी अपना पाट भी बदल लेती है।

जल्दी ही शंकर घर लौट आएगा, चल पड़ा है। अमित ने बिसूरती हुई रुंपा को दोनों हाथ से पकड़ कर उपर उठाया, चेहरा आँसुओं से लथपथ... आँगन में रखी खाट पर बिठा दिया।

रुंपा को लगा इन बाँहों में कितना भरोसा, कितनी उम्मीद, कितनी सांत्वना भरी हुई है। इन बाँहों में दैहिक उत्तेजना का ताप नहीं है। ये कुछ माँगती नहीं, देती हैं।

क्या ये हाथ आखिरी बार उसे छू रहे हैं। ये अंतिम भरोसा, अंतिम उम्मीद, अंतिम सांत्वना है...। अमित की आवाज कँपकँपा रही है... 'तुम क्या करोगी रुंपा। छोड़ दोगी हमें... वापस शंकर के पास जाओगी... नईं नईं, तुम एसा नईं कर सकती... अब मैं हूँ तुम्हारा साथी, तुम हो मेरी सबकुछ।'

'हाँ... मैं जानती हूँ... तुमने मेरा साथ तब साथ दिया, जब मैं दसों दिशाओं से हार चुकी थी। अंतहीन इंतजार के लिए अकेली टूटी झोपड़ी में तंबाकू की नशीली गंध के साथ छोड़ दी गई थी।'

'नईं... मैं कोई अहसान नहीं जता रहा... हे प्रभो, आमी केमोन दुविधाए पड़े गेलम... बस मैं तुम्हें याद दिला रहा हूँ कि हमें दो बच्चे पैदा करने थे, जल्दी जल्दी... एक साथ... याद है तुम जुड़वा केला लाई थी, मैने पूछा तो तुम शरमा गई थी और मेरी मोटी बुधि में बाद में घुसा कि ओह... ये बात है...। तुम्हारी मंशा मैं भाँप गया था। अब क्या करोगी तुम... मैं रोकूँगा तुम्हें... एक बार... उसके बाद जो तुम चाहो। मैं तुम्हारे

रास्ते में कभी नहीं आऊँगा... जेटा तुमि भालो बोझो, शेटे करो... तुम स्वतंत्र हो... लेकिन मैं नहीं भूल पाऊँगा तुम्हें... जी नहीं पाऊँगा... क्या करूँगा पता नहीं...,शायद यहाँ से दूर... बहुत दूर चला जाऊँ... बस तुम खुश रहना... शंकर को फिर गंगा में नाव लेकर ना जाने देना... गंगा का माथा फिर गया तो... नहीं... मैं रोऊँगा नहीं... कोई अहसान ना मानना... आमी तोमा के खूब भालो बाशी। तुम जब टूट गई थी, मैंने सहेज लिया। बस और क्या किया... मेरी जगह कोई भी तुम्हें इतना ही प्यार करता। तुमने मेरा इतना खयाल रखा कि कभी शंकर को याद कर मेरे सामने रोई नईं... मैं सोचता था कि दुख तो तुम्हें होता होगा... फिर कैसे साधा दुख को... शायद ये स्त्री का सबसे बड़ा गुण है। एक दुख भीतर जीते हुए बाहर एक सुख का संधान...। स्त्री ही कर सकती है... तुमने महसूस नहीं होने दिया कि तुम दुब्याही हो... आह... तुम दुख उठाने के लिए नहीं बनी हो...। जब पहली बार तुम्हे देखा था, याद है। तुम बीड़ी की टोकरी लिए बाजार की तरफ जाने के बजाए गंगा के पानी में घुसी जा रही थी... तुम गा रही थी -

सूजोन माँझी रे,

कौन घाटे लगाई बा तोमार नाव,

आमी पारेर आशाए बोशे आछी...

तुमी लोइया जाओ,

कौन घाटे लगाइबा तोमार नाव... सूजोन माँझी रे...'

मैंने पुकारा था, तुम पलटी थी, और मैं वहीं ठहर गया था। लौट नहीं पाया कभी उस घाट से। नजमा आपा शुरू से चाहती थीं कि मैं तुमसे मिलूँ, शायद उनके दिमाग में कोई बात रही होगी। वे भी थीं मेरे पीछे।

रीना दास कैसे भड़की थी...'शादी... फिर... पहले का पता नहीं, जीता है या मर गया... कैसे करेगी... नहीं नहीं... ये अनर्थ ना करने दूँगी।'

'गंगा के तूफान में फँस के कोई बचा है का...' नजमा आपा चिल्लाई थीं। मैं भी कोई हड़बड़ी में नहीं था... मैं इंतजार करता... किया भी... तुम जानती हो। मेरी विधवा माँ कैसे चिल्लाई थी तुम पर...' मेरा बेटा ही मिला था तुझे फाँसने के लिए... अपने मायके क्यो नहीं चली गई, धुलियान में क्यों परी है, कुँवारे ही मिले, किसी रँडुवे को पकड़ती, मैं खोज देती हूँ, तू छोड़ दे मेरे बेटे को...' माँ चिल्ला रही थी, नजमा आपा उनसे भिड़

गई थीं। तुम अविचल खड़ी थी। मुझे लगा कि तुम कहीं बदल ना जाओ... पर तुमने मेरी तरफ देखा, मैं याचक था, तुम समझी और फिर सारे विरोधों से बेपरवाह हम एक हो गए। तुम कौन सी आसान थी। मुझे कितना भगाया अपने पीछे पीछे... बीड़ी की टोकरी भर भर कर दरवाजे के पास रख देती या नजमा आपा से कहलवा देती। जैसे मैं कोई शेर हूँ... खा जाता तुम्हें... मैं हँसता था, देखो तो, शंकर की बउ कैसे बचती है हमसे। वो तो हमने भी हार ना मानी। तुम अगर ताँत की साड़ी सी मजबूत थी तो मैं महाढीठ। हार मानता तो तुम ना मिलती। वो तो राजू दा के साथ टीवी हस्पताल में हम दोनों ना रहते दो दिन तक एक साथ तो तुम ठीक से कहाँ जान पाती हमें। राजू दा को एडमिट कराने के लिए तुम्हें मेरी जरूरत पड़ी। ननकू भागा भागा आया और मैं बीड़ी की बोरी वैसे ही पटक कर भागा। तब पहली बार तुम मेरे काम काज पर चिचियाती रही, मैं सुनता रहा... मुग्ध होता रहा... दैव का विधान था ना ये सब। तब तुम जातरा नाटक से बाहर निकल आई बोनदेवी (वनदेवी) जैसी दिख रही थी, जो अपने भक्त के नासमझ बेटे को बचाने जंगल में उतर आई हो... तुम्हारा चेहरा भी बोनदेवी जैसा हो गया था...

याद है, ढिबिया बुझा कर तुम चुपके से कई रातों को चुपचाप सोती रही, हम सिर्फ बातें करते रहे, तुम्हारे बचपन की, परिवार की, सपनों की, बच्चों की, शहर की, गाँव की... ना तुमने हाथ बढ़ाया, ना मैंने। संकोच की दीवार देर से टूटी। मैं चाहता तो जिद करता, तुम शायद मान भी जाती... लेकिन मैं चाहता था कि तुम पहल करो, जब मन हो। तुम आओ... और तुम आई, आकाश को मेघ की तरह ढकती हुई...। बुहार कर ले गई सारे अवसाद। आज भी, मैं तुम्हें देह की तरह नई, मन की तरह देखता हूँ... एक मन, जो दूसरे मन तक बेधड़क पहुँचता है, बिना किसी दीवार को पार किए। ये मन पर मन का भरोसा है। तुम चली भी जाओगी तो क्या अपना मन ले जा पाओगी? जाओगी तो एक बार जरूर पूछूँगा - 'तोमार प्राणे दया नई की?'

रुंपा की देह पिघल रही है... ठोस से द्रव्य की तरफ। कुछ छूट रहा है... एक भरोसा, उम्मीद, सांत्वना... और झूम झूम कर तर-बतर करता हुआ प्रेम...

'क्या ये छूटने वाले हैं...?'

कोई आवाज दे रहा है उसे... गंगा के उस पार से... गंगा की सतह पर तैर रही हैं आवाजें...

'रानी... स्वर्ण फूल ले आया हूँ... सात पहाड़ पार कर गया... भीषोण कष्ट झेला... अब तो कथा पूरी करो... क्या कथा का राजा सचमुच फूल ले आया था... उसे क्या क्या

कष्ट हुआ था... क्या उसे भी मेरी तरह बंदी बनना पड़ा था। उसे भी पीटा गया था। वह भी रानी से दूर रोता रहा, ये सोच कर कि शायद ही कभी मिलना हो और अपने नाम का टूहटूह लाल सिंदूर देख सकेगा... बताओ ना... तुम तो सब जानती हो... तुम उस कथा में हो... रानी हो... तुमने मुझे राजा बनाया... मैं तुम्हारा राजा... लौट रहा हूँ... तुम्हें रात का अपना वादा भी पूरा करना है... अरे... ये क्या... काहे री नलिनि तू कुम्हलानी...

रो रही हो... रोओगी तो ये फूल कुम्हला जाएँगे... ये रानी के हँसने पर खिलते हैं... गाओ ना... सुनी छी सुनी छी... तोमार गान... छोड़ो चलो... हम बीड़ी और मछली दोनों की दुनिया से दूर चलते हैं... बहुत काम है दुनिया में... वही करेंगे जिसमें तुम खुश रहो... उठो तो... कहो तो... की कोरबे... ओह... अच्छा... ये... तभी तुम चुप हो... खामोश... जैसे उस दिन गंगा थी, मेरे बरबाद होने से पहले... खामोश... ये खामोशी जिंदगियाँ बरबाद करती हैं, उस दिन ना तुम समझ सकी थी ना मैं... आज मैं कुछ कुछ समझ रहा हूँ... पर मैं तुम्हें सुन कर जाऊँगा...' शंकर की आँखें गुस्से से लाल हो रही हैं... गुस्से में अमित को घूर रहा है। जैसे पूछ रहा हो, तुम्हें मेरी ही बीवी मिली थी, ब्याहने को। धुलियान में लड़कियों की कमी थी क्या... मैं मरा तो नहीं था ना... सबने कैसे मान लिया कि मैं मर गया... अगर मर भी गया होता तो क्या इतनी जल्दी ये सब... ओप्फ... दूर हो जाओ... मैं आ गया हूँ...'

'नईं... नईं...' रुंपा की चेतना जा रही थी... वह बड़बड़ा रही थी।

'आमी की कोरबे? आमी जानी ना...' उसकी माँ की आवाज कान में गूँज रही थी - 'कहा था ना, भुट्टो दाई से मत उलझ... देखा... माछ ने ही काटा तुझे... कहीं का ना छोड़ा।' भुट्टो दाई चीख रही हैं - 'मरेगी तू... देखना... चोरनी कहती है मुझे...' शंकर कह रहा था - 'आज जाने का मन नहीं है... माछ मारने का अभ्यास नईं रे... ना होगा हमसे... बीड़ी पाल रही हैं ना पूरी धुलियान बस्ती को... हम भी पल जाएँगे... काहे को जिद कर रही है... चल जल्दी आता हूँ... रात का वादा याद रखना... कोई बहाना नहीं चलेगा... हाँ... आज जम के...।' नाव चली जा रही है... छप छप चप चप... पानी की बूँदें रुंपा के चेहरे पर... पतवार उठा कर पानी फेंका शंकर ने...

रुंपा को होश आया। अमित उसके चेहरे पर पानी के छींटे मार रहा था। शायद उसकी ध्वनियाँ सुन रहा था। नजमा आप संज्ञाशून्य हैं लेकिन रीना दास की आँखें चमक रही हैं। वह कुछ बोल रही हैं, गली की औरतें, बच्चों की भीड़ लगी है। शांति साहा और रीना की आवाजें... 'शंकर का पहला हक है, वो ले जाएगा इसे। छोड़ना भी नईं चाहिए।

पहला पति है, तलाक भी नहीं हुआ, कानून भी उसके साथ होगा। अमित दास का हक नहीं बनता। कुछ ले दे के अमित को मना लेंगे। आखिर दोनों रहते तो शंकर की झुग्गी में। शंकर तो अपने घर ही आएगा ना... कहाँ जाएगा। जाना तो अमित को पड़ेगा। ठीक हैं उसने सँभाला, साथ दिया... ब्याह भी कर लिया, तो क्या... अब हक भी जताएगा। ये तो ठीक बात न हुई। शंकर तो हमीं लोगों से पूछेगा ना... एक साल भी ना सँभाल पाए आप लोग मेरी बउ को... ब्याह दिया ना... बोझ लग रही थी तो डुबो देते गंगा में... ये का किया, दीदी... क्या किया... ना ना मैं शंकर का सामना ना कर पाऊँगी... क्या मुँह दिखाऊँगी उसे... मैं तो कह दूँगी कि मेरा कोई हाथ नहीं... नजमा आपा से पूछो, वो ही पूरे गाँव को समझाती फिर रही थीं...'

'चुप्प हो जा... तुझे शंकर की पड़ी है। एक साल कम होता है क्या...?' नजमा आपा दहाड़ी।

अमित ने मुसीबत में सहारा दिया था। तब कहाँ था शंकर। मैं दुबारा इसकी गृहस्थी नहीं उजड़ने दूँगी। चाहे जो हो जाए। रीना मुँह बिचका रही है। कानाफूसी की आवाजें... कई जोड़ी आँखें, उसे घूर रही हैं। अमित दास की बूढी माँ निरीह-सी पूरे कुनबे के शोर में कराह उठी।

रुंपा ने अमित की तरफ देखा... अमित की सूखी नजर चौखट पर लगी थी... धीरे धीरे रुंपा का हाथ छूट रहा था... रुंपा हौले से कराही... दर्द के ढेरों सितारे टूट कर बिखरे... सूजी हुई आँखें चमक रही थीं... उसने अमित का हाथ कस कर पकड़ लिया...।

दिसंबर की वह दोपहरी रोज की तरह नही थीं... हल्की ठंड से बचने के लिए सारी औरतें, लड़कियाँ फिर बोरा बिछा कर गंगा किनारे बीड़ी बनाने बैठ गईं। नजमा आपा और रीना दास को इंतजार था रुंपा का, जो अमित को काम पर भेज कर उनके साथ बैठ कर कुछ सिलाई बिनाई करेगी। आज देर हुई।

'शोनी... ओ शोनी... जा रुंपा को बुला ला...।'

नजमा आपा ने आवाज लगाई। शोनी वापस आई... साथ में सनसनीखेज खबर भी लाई। उसे लगा सुनते ही हंगामा मच जाएगा। रुंपा-अमित का घर खाली था... सारा सामान वैसे ही पड़ा था।

गंगा शांत दिख रही थी। सूरज की मुलायम रोशनी में पानी की की सतह चमचमा रही थी। जैसे किरणें सूरज से होती ही गंगा की आत्मा में पैठ रही हो और गंगा उसकी

आभा में स्नेह, स्वप्न मग्न...। दो पानी पक्षी कहीं से उड़ते हुए आए, किर्र किर्र किर्रर... करते हुए पानी में चोंच मारा, पानी और सूरज दोनों लेकर उड़ गए।

गंगा को छूकर आती हवा में ठंडक थी, नजमा आपा ने दुशाला ठीक से सिर पर ओढ़ा, लंबी साँस ली। वे कुछ बुदबुदा रही थीं... 'फी अमानअल्लाह...।' यह रीना की समझ से परे था। वह इतना ही समझी कि गंगा ने अपना पाट बदल लिया है...।